भारतीय जनजातियों का आर्थिक संगठन

डॉ0 मनोज कुमार मिश्र*

भारत एक विशाल देश है जहाँ अनेक धर्म, सम्प्रदाय जाति, प्रजाति एवं जनजाति के लोग निवास करते हैं। विश्व के जनजातीय मानचित्र में भारत का स्थान 'अफ्रीका' के बाद आता है। भारत में जनजातियों की जनसँख्या संसार के आधे से भी अधिक देशों की जनजातीय जनसंख्या से अधिक है। भारत में जनजातीय संख्या 840 है लेकिन 541 को ही 'अनुसूचित जनजाति' (Scheduled Tribe) के रूप में मान्यता प्राप्त है। शेष जनजातियां या तो जनसंख्या की दृष्टि से बहुत छोटी हैं या वे इतनी पिछड़ी हुई नहीं हैं कि उन्हें संविधान में अनुसूचीबद्ध किया जा सके। इस प्रकार **भारत में लगभग 8.20% जनसंख्या जनजातियों की है। भारत में उरांव, गोण्ड, मुण्डा, कादर, थारू जैसी जनजातियों की जनसंख्या लाखों में है,** दूसरी ओर ऐसी भी जनजातियों हैं जिनकी लाखों हजार से भी कम है।

वस्तुतः स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद 1950 ई0 में जनजातीय समुदाय की पहचान कर 212 जनजातियों की ऐसी सूची तैयार की गयी, जिन्हें 'अनूसूचित जनजाति' (ST) कहा गया। संविधान के **अनुच्छेद 342 (i)** के अन्तर्गत जनजातियों को परिभाषित करते हुए लिखा गया है कि– ''अनुसूचित जनजातियां वे जनजातियां अथवा जनजातीय समुदाय या उनका कोई हिस्सा या इन जनजायिों का कोई समूह है हिन्हें राष्ट्रपति द्वारा सार्वजनिक सूचना देकर 342 (i) के अन्तर्गत रखा गया है।'' वर्तमान समय में अनुसूचित जनजातियों की संख्या 560 हो गयी है। इनकी संख्या में परिवर्तन होता रहता है, क्योंकि राट्रपति की अधिसूचनाओं के आधार पर इनकी संख्या घटती–बढ़ती रहती है। अर्थात् जनजाति तथा अनुसूचित जनजाति में प्रमुख अन्तर यह है कि जनजाति के अन्तर्गत देश की सभी जनजातियां आती हैं जबकि अनुसूचित जनजाति के अन्तर्गत केवल वे ही जनजातियां आती हैं, जिन्हें संवधिान में सम्मिलित किया गया है, या जिन्हें सम्मिलित किए जाने की राष्ट्रपति ने संस्तुति दी है।

आदिम समाजों में अर्थव्यवस्था प्रत्यक्ष रूपा से आदिम लोगों की जीविका–पालन या जीवन–धारण से सम्बन्धित है। **जीवन–धारण के लिए आवश्यक वस्तुओं का उत्पादन करना, उनका वितरण करना तथा उपभोग करना ही उनकी 'आर्थिक क्रियाओं' का आधार है,** और ये क्रियाएं एक आदिम समाज के सम्पूर्ण पर्यावरण विशेष कर भौगोलिक पर्यावरण द्वारा बहुत प्रभावित होती हैं, इसीलिए जीवन–धारण या जीवित रहने के साधनों को जुटाने के लिए जनजातीय लोगों को कठोर परिश्रम करना पड़ता है। आर्थिक क्रियाओं के संगठन को ही 'अर्थव्यवस्था' कहते हैं। इस सन्दर्भ में **'Ruth Bunzel'** ने **'General Anthropology'** में लिखा है कि– **"Economics is the total organization of behavior with reference to the problems of Physical Survival."**

अर्थात् शारीरिक अस्तित्व की समयस्याओं से सम्बन्धित व्यवहार के सम्पूर्ण संगठन को अर्थव्यवस्था कहते हैं। अर्थव्यवस्था के सम्बन्ध में **'मजूमदार एण्ड मदन'** ने लिखा है कि– ''जीवन की दिन–प्रतिदिन की अधिकाधिक आवश्यकताओं को कम से कम परिश्रम से पूरा करने के हेतु मानव सम्बन्धी तथा मानव प्रयत्नों को नियमित व संगठित करना अर्थव्यवस्था है। यह एक तरीके से सीमित साधनों द्वारा असीमित साध्यों (आवश्कताओं की अधिकतम संतुष्टि) का प्रयत्न है।'' जनजातीय समाजों में आर्थिक जीवन पर भौगोलिक पर्यावरण का सर्वाधिक प्रभाव होता है। 'प्रौद्योगिकीय पिछड़ेपन' से उनके

* **असिस्टेन्ट प्रोफेसर, समाजशास्त्र विभाग, गनपत सहाय पी0जी0 कालेज, सुलतानपुर (उ0प्र0)**

लिए प्राकृतिक पर्यावरण के प्रभावों से छुटकारा पाना असम्भव है। यहां हम भारतीय जनजातियों की आर्थिक–क्रियाओं का विश्लेषित करने का प्रयास करेंगे।

भारतीय जनजातियों में कुछ जनजातियां शिकार करने एवं भोजन इकट्ठा का कार्य करती हैं। इस श्रेणी में ट्रावनकोर–कोच्चि (केरल) के **कादर, मालापंडारम, पलियन, पनियन उड़ीसा व बिहार के बिरहोर, खड़िया, तमिलनाडु के चैचू उत्तर प्रदेश की राजी जनजातियां आती हैं।** ये कृषि नहीं करती और मूलतः प्राकृतिक सम्पदाओं पर आश्रित रहते हैं। प्रत्येक मौसम में अपेक्षित भोजन सामग्री प्राप्त करने के लिए इन्हें खाना–ब–दोशी रूप में घूमना पड़ता है। जंगली आम, बड़, पीपल, तेंदू इन चार फलों को ये बड़े चाव से खाते हैं।'महुआ' भारतीय जनजतियों के लिए कल्पवृक्ष के समान है। पक्षी, खरगोश, मछली, हिरन आदि का शिकार व्यक्तिगत रूप से एवं बड़े जानवरों का शिकार सामूहिक रूप से किया जाता है। वैसे इन लोगों के पास सामूहिक आवश्यकताओं की पूर्ति के बाद कुछ शेष नहीं रहता किन्तु फिर भी कुछ जनजातियों शहद एवं कुछ विशेष प्रकार के फल और औषधि के रूप में उपयोगी कंद–मूल आदि का संग्रह विशेष रूप से बेचने के लिए करती है। भारतीय जनजातियों 3% हिस्सा इसी वर्ग का प्रतिनिधित्व करता है।

भारत में जनजातियों का एक वर्ग केवल पशुपालन के माध्यम से अपनी आजीविका प्राप्त करती है। पशुपालक जनजातियों का सर्वोच्च उदाहरण **हिमाचल प्रदेश के 'गुज्जर' और दक्षिण के नीलगिरि पर्वत की 'टोडा' जनजातियां हैं।** 'गुज्जर' जनजाति जो कि चम्बा जिले में सर्वाधिक हैं, पालतू पशुओं का व्यापार भी करती हैं। **देहरादून की 'खस'** जनजाति भी गाय पालने एवं बैल बेचने का व्यवसाय भी करती है। **राजस्थान के 'भील' तथा 'लम्बाड़ी'** भी पशुपालन को अपनी आजीविका मुख्य साधन बनाये हुए हैं। 'टोडा' जनजाति विशुद्ध रूप से पशुपालक है। इनमें भैंस पालन टोडा के आर्थिक जीवन ही नहीं वरन् धार्मिक एवं सामाजिक जीवन की धुरी है। इनकी सांस्कृति का आधार भैंस है इसलिए इनकी संस्कृति **'भैंस–संस्कृति** (Buffalo-Culture) के नाम से जानी जाती है। उतराखण्ड की **'भोटिया'** जनजाति भी खेती के साथ पशुपालन का व्यवसाय करती है।

कृषक या खेती करने वाली जनजातियां दो प्रकार की हैं। भारतीय कृषक जनजातियों में एक वे हैं जो स्थायी कृषि करती हैं। तथा दूसरी वे जो स्थानान्तरित या 'झूम–कृषि' को अपनाती हैं। स्थायी कृषि का स्वरूप वही है जो ग्रामीण–समाजों में पाया जाता है। स्थायी कृषि करने वाली जनजातियों में राजस्थान के **गोंड और भील, मद्रास के बड्ग, कोटा, इरूला व परजा, बंगाल के संथाल, आसाम के खासी, मणिपुरी, झारखण्ड के मुण्डा, हो तथा उत्तर प्रदेश के थारू, मझी, विण्ड आदि प्रमुख हैं।**

<u>स्थानान्तरित कृषि अथवा–'झूम–कृषि' (Shifting Cultivation or Jhum-Cultivation)</u> : झूमकृषि जनजाति की एक विशिष्ट तकनीक है। झूम कृषि या स्थानान्तरित का आशय है, भूमि के किसी क्षेत्र का चुनाव करके पेड़/पौधों या वनस्पतियां काट दी जाती हैं। (अप्रैल–मई) लकड़ियां सूख जाने पर आग लगा दी जाती है। पहली वर्षा (जून–जुलाई) होते ही लकड़ी की राख मिट्टी में मसल कर बीज बो दिए जाते हैं। सहज रूप से जो फसल प्राप्त होती है उसी से सन्तोष किया जाता है। कुछ समय बाद (न्यूनतम 3 वर्ष तक/अधिकतम 5 वर्षों तक) ये स्थान बदलते रहते हैं इसी कारण इसे **<u>'स्थानान्तरित कृषि' (Shifting Agriculture)</u>** के नाम से जाना जाता है। यह धारणा है कि कृषि करने के लिए धरती माता को हल चलाकर कष्ट नहीं दिया जा सकता है। स्वाभाविक रूप से धरती माता जो खुश होकर (झूम–झूमकर) दे देती हैं, उसी से सन्तोष करना चाहिए । झूम–कृषि की यह परम्परा विभिन्न जनजातियों में अलग–अलग नामों से जानी जाती है **जैसे– नागा जनजाति इसे 'झूम' : मरिया (म0प्र0) 'पेण्डा, खोण्ड इसे 'पोडू' (Podu) और बैगा जनजाति इसे 'बेवर' (Bewar) कहती है। पोडू' (Podu) कृषि में पहाड़ी के ढ़लानों पर सीढ़ीनुमा खेती की जाती है आन्ध्र के कोड़ारेड्डी उड़ीसा के खोण्ड व बस्तर के माड़िया इसी प्रकार की खेती करते हैं।**

भारतीय जनजातीय जनसंख्या का एक हिस्सा हस्तशिल्पकारी/दस्तकारी के माध्यम से अपना जीविकोपार्जन करता है। ये जनजातियां अपना जीवन–यापन करने के लिए हस्तशिल्पकारी के कार्य जैसे–टोकरी बुनना, पत्तल–दोना बनाना, चटाई बनाना, पंखे बनाना, मिट्टी तथा धातु के बर्तन बनाना, लोहे के औजार बनाना सूत कातना, बेंत का काम, बाँस की खपच्चियों का उपयोग, रस्सी बनाना तथा लकड़ी आदि के घरेलू उपकरण बनाने का कार्य करती हैं। छोटा नागपुर और उड़ीसा के **'बिरहोर'** जंगल की लताओं से बहुत मजबूत और सुन्दर रस्सी बनाते हैं। **'सओरा कोण्ड'** और **'गोण्ड'** सूत कातने, बेंत का काम, मिट्टी के बर्तन, धातु का काम बहुत अच्छा करते हैं। 'घासी' मृत जानवरों से तॉत तैयार करते हैं। मद्रास के **'इरूला'** बांस की चटाईयां एवं टोकरियां बुनते हैं।

इन कार्यों के अतिरिक्त भारत की कुछ जनजातियां स्वतंत्रता–प्राप्ति के बाद स्थापित उद्योगों में कार्य करने लगी हैं। असम के चाय बागानों, कश्मीर के सेब के बगीचों तथा मध्य प्रदेश, उड़ीसा, एवं बिहार के प्रमुख उद्योगों तथा खानों में सम्बन्धित क्षेत्रों के जनजातीय मजदूर ही कार्य करते हैं। **'मजूमदार एवं मदन'** के अनुसार मध्य प्रदेश के मैगनीज उद्योगों में 50 प्रतिशत जनजातीय मजजूर कार्यरत हैं। तथा जमशेदपुर के टाटा के लौह उद्योग में 17 हजार से अधिक श्रमिक केवल **'संथाल' तथा 'हो'** जनजाति के हैं, **'मजूमदार एवं मदन'** ने लिखा है कि– ''औद्योगिक जीवन से जनजातियों का सम्पर्क दो प्रकार से हुआ है या तो वे नौकरी की तलाश में स्वयं ही औद्योगिक क्षेत्रों में जा बसी हैं या तो उनके निवास–स्थान में ही उद्योग का विकास हुआ है।'' जमशेदपुर में लोहे के कारखाने, रानीगंज व झरिया की कोयला खदानों में संथाल, हो तथा अन्य जनजातियां लगी हैं। असम व दार्जलिंग (नागा, लाखेर, गारों) के चाय बगानों में अनेक जनजातियां लगी हैं।

भारतीय जनजातीय संस्कृति में परिवर्तन का आधार आर्थिक परिवर्तन ही है। क्योंकि जनजातियों में आधुनिक तकनीकी एवं विचारों को अपनाया जा रहा है जिसका प्रभाव उनकी आर्थिक व्यवस्था पर पड़ रहा है। **शिक्षा, जनजातीय बाजारों का शहरी बाजारों एवं बड़े–बड़े बाजारों के साथ सम्बन्ध सहकारी समितियां, व्यावसायिक बैंक, मजदूर संघ, भूमि बंधक अधिनियम तथा उनकी जानकारी, सरकारी व अर्द्धसरकारी संस्थाओं में आरक्षण** जैसी सुविधाओं के विस्तार के कारण जनजातीय जीवन में भी उल्लेखनीय सुधार हुआ है। **'विरहोर'** जैसे घुमन्तू जनजातियां अब कालोनी में स्थायी आवास प्राप्त करने लगी हैं। स्थानान्तरित कृषि समाप्त प्राय है उनका स्थान स्थायी कृषि लेने लगी है। इसी प्रकार **गोण्ड, बैगा** इत्यादि जनजातियां अपनी परम्परागत अर्थव्यवस्था को त्यागकर नवीन अर्थव्यवस्था की ओर अग्रसारित हो रही हैं।

आदिवासियों से उनकी जमीन और आजीविका छीन लेने का एक और साधन रहा है सरकार द्वारा निजी क्षेत्र को अचानक अभयारण्य या राष्ट्रीय उद्यान घोषित किया जाता है उस क्षेत्र में पीढ़ियों से जिन्दगी बसर करते आए लोग वहां से हटने पर मजबूर कर दिए जाते हैं। फिर वे कहां रहेंगे, क्या करेंगे, उनके जीविका–निर्वाह का साधन क्या होगा इससे सरकार को कोई मतलब नहीं होता। भारतीय जनजातियों का जीवन 21वीं सदी में भी विभिन्न समस्याओं से ग्रस्त है। वर्तमान भारत सरकार से अपेक्षा है कि वह इस ओर आवश्यक जरूरी कदम उठाते हुए इनके जीवन स्तर को सुधारने का प्रयत्न करेगी, नहीं तो **भारतीय समाज की सबसे विकराल आंतरिक समस्या 'नक्सलवाद' से छुटकारा पाना सम्भव नहीं होगा।** वर्तमान समय में भारत की 30% आबादी भूखे पेट अपना जीवन व्यतीत करती है। जब तक भारतीय जनजातियां शैक्षिक सामाजिक, एवं आर्थिक दृष्टि से मजबूत नहीं किया जाता तब तक '**कलाम**' साहब के **'भारत 2020'** के सपनों को साकार नहीं किया जा सकता।

सन्दर्भ सूची :–

1. डॉ0 मुकर्जी, रवीन्द्रनाथ : 'सामाजिक मानवषास्त्र की रूपरेखा,' विवेक प्रकाषन, 7 यू0ए0, जवाहर नगर, नई दिल्ली, 2013, पृ0सं0–287–288 ।
2. श्रीमती हेमलता श्रीवास्तव : 'भारतीय समाज की संरचना,' साहित्य भण्डार, 50, चाहचन्द, इलाहाबाद, ; 1988, पृ0सं0–27 ।
3. तिवारी, ए0सी0 : 'सम आस्पेक्ट्स ऑफ द रेलिजियस प्रैक्टिसेज एमॅग द राजीज ऑफ कुमायूँ ,' इन एल0पी0 विद्यार्थी एण्ड एम0 झा (सम्पा0), एकोनॉमी एण्ड रेलिजन ऑफ द हिमालयाज, ओरिएण्ट पब्लिषर्स दिल्ली, 1986, पृ0सं0–18 ।
4. घुरिये, जी0एस0 : 'द एर्बोरिजिनल सो काल्ड एण्ड दियर फीचर,' पुणे, 1943 पृ0सं0–36 ।
5. एल्विन, वी0 : 'न्यू डील फार ट्राइबल इण्डिया,' गृह मंत्रालय भारत सरकार ; 1963, पृसं0–01 ।
6. देषाई, ए0आर0 : 'रूरल इण्डिया इन ट्रॉजिषन,' बम्बई 1961, पृ0सं0–5 ।
7. डॉ0 दुबे, जी0पी0 एण्ड पाण्डेय, षम्भूनाथ : 'सामाजिक मानवषास्त्र,' मिश्रा ट्रेड़िग कारपोरेषन, मैदागिन, वाराणसी, 2010, पृ0सं0–294 ।
8. वन्दना मिश्रं : 'आखिरकार, अपने घर में रहेंगे वनवासी,' लेख दैनिक जागरण ; हिन्दी समाचार पत्र, लखनऊ, अंक–21 दिसम्बर 2006 ।